B.A. II Hay
Paper - III

Mathura Art - मथुरा कला

उत्तरी भारत में मथुरा कला का बहुत बड़ा केन्द्र था। इसकी समृद्धि का मुख्य समय पहली शताब्दी से तीसरी शताब्दी ई॰ तक था। किन्तु उसके बाद भी लगभग चार सौ वर्षों तक अर्थात् चौथी से सातवीं सदी तक मथुरा के शिल्प वैभव का युग बना रहा। कुषाण युग में शिल्प कर्म और प्रतिमा निर्माण के लिए मथुरा की ख्याति दूर-दूर तक हो गई थी। मथुरा के शिल्पियों की कर्मशालाएं जिस ढंग से कार्य कर रही थी वह आश्चर्यजनक है। उन्होंने सहस्त्रों मूर्तियों की रचना की जिनमें से अधिकांश आज भी सुरक्षित है। परखम जैसी अति महाकाय प्रतिमाओं के निर्माण में मथुरा के शिल्पी मौर्य-युग में ही अभ्यस्त हो चुके थे। उसी परम्परा को कुषाण युग में बोधिसत्व, बुद्ध, नाग और यक्ष देवताओं की विशालकाय मूर्तियों के निर्माण द्वारा आगे बढ़ाया गया। बाहरी स्थानों में भी मथुरा से मूर्तियों का निर्यात होने लगा। सांची, सारनाथ, कौशाम्बी, श्रावस्ती पंजाब, राजस्थान का सीमा प्रदेश, बंगाल, अहिच्छत्रा एवं कोसम आदि स्थानों में मथुरा के लाल चकतेदार पत्थर की मूर्तियाँ पाई गई है। मथुरा शिल्प में प्रयुक्त सुन्दर मनोहिरा रंग का पत्थर रूपवास और सीकरी के खदानों से लाया गया था।

मथुरा बौद्ध जैन और ब्राह्मण- तीनों धर्मों का केन्द्र था, तथा तीनों कलाओं के अवशेष यहाँ मिले हैं। मथुरा तीनों धर्मों का तीर्थ

Scanned with CamScanner

स्थान था। बौद्धों के और जैनों के स्तूप और मन्दिर तथा ब्राह्मणों के देवस्थानों का निर्माण मथुरा में हुआ। उनके सम्बन्ध में अनेक प्रतिमाएं मूर्तियां स्थापत्य और शिल्प के नमूने मथुरा में निर्मित हुए।

मथुरा का स्वर्णयुग कुषाण सम्राट कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव का राजकाल था जब यह कला परम उत्कर्ष को प्राप्त हुई। उस युग की श्रेष्ठता की तुलना में भारतीय कला के बहुत कम ही कम युग ठहरते हैं। मथुरा के शिल्पियों ने भरहुत और सांची के प्रस्थानों की बारीक और अच्छा काम करने की तरीका अपनाई।

मथुरा कला शैली और उसके विषय:-

कला शैली के विषय में मथुरा के कुशल शिल्पियों ने मूर्तियों के सम्मुख दर्शन का आग्रह रखा किया और वे पार्श्वगत, पृष्ठगत आदि कई प्रकार के स्थानक मुद्राओं में पुरुष और स्त्रियों की मूर्तियों का निर्माण करने लगे। स्त्रियों की सुन्दर मूर्तियां गढ़ने में उन्होंने विशेष रुचि दिखाई जैसा वेदिका से प्रकट है। उनके रूप और आकृतियों में बहुत लालित्य है और आभूषण एवं वस्त्रों का भी नूतन प्रयोग किया गया है। वेदिका स्तम्भों की शालभंजिकाएं उद्यान क्रीड़ा और सलिल क्रीड़ा की विविध मुद्राओं में दिखाई गई हैं। इन दृश्यों में सामाजिक संस्कृति का स्पष्ट अंकन है। कलाकारों ने अपने आपको रूढ़ियों के बन्धन से नितान्त मुक्त कर लिया था और वे धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृश्यों को पूरी

स्वतंत्रता से अलंकृत कर रहे थे।

मथुरा शिल्प में अलंकृत विषयों को जब हम देखते हैं तो उनकी मौलिकता और विविधता की गहरी छाप मन पर पड़ती है। और शिल्पियों की प्रतिभा से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जाता। मथुरा के शिल्पियों ने आगे आने वाले युगों के लिए बहुत कुछ मौलिक रचनाएं की हैं। मथुरा के शिल्पियों ने बुद्ध प्रतिमा के रूप में विश्व कला की सबसे बड़ी विशेषता प्रकट करके दिखाई। उन्होंने पहली बार बुद्ध को मानव रूप में प्रदर्शित किया। मथुरा से पूर्व केवल बोधिवृक्ष, भिक्षा-पात्र, उष्णीष स्तूप आदि प्रतीकों से बुद्ध की [illegible] चित्र का चित्रण किया जाता था। बुद्ध की प्रतिमा मथुरा के शिल्पियों की सबसे ऊँची मौलिक देन है।

मथुरा के शिल्पियों को ब्राह्मण धर्म सम्बन्धी देवी-देवताओं की मूर्तियों के प्रथम निर्माण का श्रेय भी है। विष्णु, लक्ष्मी, दुर्गा, सप्तमातृकाएं, कार्तिकेय आदि की सबसे प्राचीन मूर्तियां मथुरा में मिली हैं। भागवत धर्म के प्रभाव से उत्तरी भारत में मूर्तियां सबसे पहले बनना शुरू हुआ था। उसके भक्ति आन्दोलन का प्रारम्भ मथुरा से हुआ।

जैन मूर्ति शिल्प के विकास में भी पूरा श्रेय मथुरा को है, क्योंकि सबसे प्राचीन जैन प्रतिमाएं और स्तूप मथुरा से प्राप्त हुए हैं। मथुरा में दो जैन स्तूप थे, पहला शुंग काल में और दूसरा कुषाण युग में बनाया गया। सौभाग्य से कंकाली

Scanned with CamScanner

टीला नामक स्थान में इन स्तूपों के सहस्त्राधिक शिलावशेष प्राप्त हुए हैं। इसकी लेख-निर्मित स्तूप थी, अर्थात् लोगों की मान्यता यह थी कि यह अत्यन्त प्राचीन काल में किसी देवता/देवों द्वारा निर्मित हुआ था। जैन स्तूप के वास्तुविन्यास का स्वरूप लगभग वही था जो बौद्ध स्तूप का था। इन स्तूपों का रूप-सम्पादन बड़े उत्साह से किया जाता था। उनके शिल्पी शिल्प कौशल से विख्यात थे। जैन वेदिका स्तम्भों पर बनी हुई शालभंजिका मूर्तियाँ वैसी ही मुद्राओं में हैं। जैसी स्तूपों में। वस्तुतः स्तूप के चतुर्दिक वेदिका स्तम्भों का जैसा सुन्दर विधान मथुरा शिल्प कला में है। वह उसकी प्रतिभा का द्योतक है। स्तूप के इस अवयव को मथुरा के शिल्पियों ने बहुत ही रोचक और सुन्दर पद तक पहुँचा दिया। बौद्ध जातक कथाओं के और जैन कथाओं के सीमित क्षेत्र से बाहर निकल कर वेदिका स्तम्भों पर जनजीवन के वास्तविक दृश्य उत्कीर्ण किए गए।

मथुरा के शिल्पियों ने जैन तीर्थंकरों की भी अनेक मूर्तियाँ बनाईं। उनके आरम्भिक रूपों का उन्होंने निर्माण किया और उसी आधार पर कालान्तर की तीर्थंकर प्रतिमाओं का विकास किया गया। ये मूर्तियाँ दो प्रकार की हैं। एक खड़ी हुई और दूसरी बैठी हुई। बैठी हुई मूर्तियाँ पद्मासन में हैं। और उनके दोनों हाथ अंक के बीच में एक दूसरे के ऊपर रखे हुए हैं। जिनको उपमा प्रफुल्ल कमल से दी जाती थी। मस्तक-

में उदार स्वरूप से विभिन्न धार्मिक एवं लौकिक-मूर्तियों का निर्माण कर भारतीय कला के स्वर्ण युग प्राप्त कला के लिए मार्ग प्रशस्त किया। मथुरा-कला को वैदिक कला की परिणति कह सकते हैं जिसने तकनीकि एवं अभिव्यक्ति की दृष्टि से एक आदर्श कला परम्परा का जन्म दिया। लाल बलुए पाषाण की-मथुरा मूर्तियों में आज भी कुषाण युगीन शिल्पी की आत्मा विचरण कर रही है जो दर्शक को बलात उस युग तक आकृष्ट करती है। मथुरा कला की मौलिकता स्वीकार करते हुए तथा विदेशी तत्वों को मात्र सहायक प्रमाणित करते हुए डा० कुमार स्वामी ने उचित ही कहा है कि —

All the Mathura sculptures showing traces of Hellenistic influence taken together constitute a very small fraction of the whole production of the school.